

Research Article

भारतीय संस्कृति का वैश्विक प्रभाव: एक अध्ययन

अजय कुमार मिश्रा¹, रामपाल यादव²

¹सहायक आचार्य, ²शोध छात्र, नेशनल पी0जी0 कॉलेज बड़हलगंज, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश, भारत।

DOI: <https://doi.org/10.24321/2456.0510.202623>

INFO

Corresponding Author:

अजय कुमार मिश्रा, सहायक आचार्य, नेशनल पी0जी0 कॉलेज बड़हलगंज, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश, भारत।

E-mail Id:

ajay89aihc@gmail.com

Orcid Id:

<https://orcid.org/0009-0009-1184-3728>

How to cite this article:

अजय कुमार मिश्रा, रामपाल यादव, भारतीय संस्कृति का वैश्विक प्रभाव: एक अध्ययन, Anu: a, Mul, Int, Jour, Vol 11, 2026 (Special Issue 2): Pg. No. 12-17

Date of Submission: 2026-09-02

Date of Acceptance: 2026-10-13

ABSTRACT

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीन एवं समृद्ध संस्कृतियों में से एक है, जिसने अपने ज्ञान, दर्शन, धर्म, कला, साहित्य, विज्ञान और जीवन-मूल्यों के माध्यम से विभिन्न देशों और सभ्यताओं को प्रभावित किया है। "भारतीय संस्कृति का वैश्विक प्रभाव एक अध्ययन" विषय के अंतर्गत भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं के अंतरराष्ट्रीय प्रसार एवं उनके प्रभाव का अध्ययन किया गया है। भारत की वसुधैव कुटुम्बकम् अहिंसा, सहिष्णुता, समन्वय और सर्वे भवन्तु सुखिनः जैसी अवधारणाओं ने विश्व को मानवीय एकता एवं शांति का संदेश दिया। बौद्ध धर्म के प्रसार के माध्यम से भारतीय दर्शन चीन, जापान, कोरिया, तिब्बत तथा दक्षिण-पूर्व एशिया तक पहुँचा। योग और आयुर्वेद ने आधुनिक विश्व में भारतीय स्वास्थ्य एवं जीवन-पद्धति की पहचान को व्यापक बनाया है। भारतीय गणित, खगोल विज्ञान, चिकित्सा तथा दर्शन ने भी वैश्विक ज्ञान-परंपरा को प्रभावित किया। भारतीय कला, स्थापत्य, संगीत, नृत्य, साहित्य और भाषा का प्रभाव अनेक देशों में दिखाई देता है। आधुनिक समय में योग, ध्यान, भारतीय भोजन, सिनेमा और भारतीय दर्शन के माध्यम से यह प्रभाव और विस्तृत हुआ है। अतः भारतीय संस्कृति का वैश्विक प्रभाव केवल ऐतिहासिक आदान-प्रदान तक सीमित नहीं, बल्कि समकालीन विश्व में भी निरंतर विकसित हो रहा है।

मुख्य शब्द: भारतीय संस्कृति, संस्कृति प्रसार, वसुधैव कुटुम्बकम्, वैश्विक प्रभाव आदि।

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति संसार की प्राचीनतम संस्कृति है। किसी देश की संस्कृति अपने को धर्म, दार्शनिक चिन्तन, कविता, संगीत, कला, प्रथाएँ, शासन-प्रबंध आदि के रूप में अभिव्यक्त करती है। मनुष्य जिस ढंग से अपने धर्म का विकास करता है, दर्शन-शास्त्र के रूप में जो चिन्तन करता है, साहित्य, संगीत और कला का जिस प्रकार से सृजन करता है, और अपने सामूहिक जीवन को हितकर व सुखी, बनाने के लिए जिन सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओं को विकसित करता है, उन सबका समावेश हम संस्कृति में करते हैं। संस्कारों की दृष्टि से भारतीय जनमानस आदिकाल से ही अत्यंत समृद्ध रहा है। जब दुनिया के तमाम देशों में सभ्यता का अंकुर फूटा भी न था, उस समय हम सुसभ्य थे और सभ्यता व संस्कृतिक उत्कर्ष का काल था। वेद दुनिया का सबसे प्राचीन साहित्य है।¹ भारत का धर्म अब भी वैदिक है, इस देश के पुरोहित व ब्रह्मण आज भी वेद-मन्त्रों द्वारा यज्ञ-कुण्ड² में आहुति देकर देवताओं व प्राकृतिक शक्तियों को तृप्त करते हैं। उपनिषदों, गीता और रामायण ने ज्ञान की जो धारा प्रवाहित की थी, वह आज भी अबाधित रूप से इस देश में बह रही है। बुद्ध और कबीर जैसे महात्माओं ने अहिंसा और प्राणिमात्र के प्रति मैत्री भावना का जो उपदेश दिया था, वह आज तक इस देश में जीवित और जागृत है। प्राचीन वैदिक धर्म में सुधार करने के लिए जो धार्मिक सुधार भगवान् बुद्ध द्वारा प्रारम्भ की गई थी, वह यहाँ के धर्मों को नष्ट नहीं कर सकी। इसके विपरीत यहाँ के सनातन वैदिक धर्म ने ही उसे अपने में लीन कर लिया। बुद्ध को भी राम और कृष्ण की तरह भगवान का अवतार मान लिया गया। बोधिवृक्ष बन गया और बौद्ध-चैत्य³ हिन्दू मन्दिरों में परिवर्तित हो गए, जहाँ भगवान् के अवतार बुद्ध की पूजा होने लगी। सबमें अपने को देखने की भावना का ही यह परिणाम था। यवन, शक, कुषाण आदि जातियों को भी इसी भावना द्वारा भारतीय समाज का अंग बनाया गया, और उनके अनेक धार्मिक विश्वासों और अनुष्ठानों को सनातन वैदिक धर्म में सम्मिलित कर लिया गया। विविध धार्मिक आन्दोलनों और परम्पराओं में आर्य लोग सदा समन्वय स्थापित करते रहे। हिन्दू धर्म में अनेक मत व सम्प्रदाय रहे हैं, उनमें विरोध और विद्वेष भी रहा है। इसके साथ ही सब सम्प्रदायों की मूल प्रेरक शक्ति वही आध्यात्म भावना रही है जो भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता है। इसीलिए उनमें विरोध के बावजूद समन्वय और ऐक्य स्थापित होता रहा।

इस्लाम के सर्म्पक से मिस्र, इरान आदि के प्राचीन धर्म नष्ट हो गये, पर भारत का धर्म कायम रहा। भारत के विचारकों ने तो इस्लाम के साथ भी अपने धर्म के समन्वय की इसी प्रवृत्ति ने दीनेइलाही⁴ के रूप में मूर्त रूप धारण किया, यद्यपि यह प्रयत्न सफल नहीं हो सकता पर भारतीय मुसलमानों को भारतीय संस्कृति की मूल भावना देने में इस देश के विचारक सफल हुए। मुसलमानों का सूफी सम्प्रदाय भारत के आध्यात्मवाद, योगसाधना और रहस्यवाद का मुस्लिम संस्करण हैं। मुस्लिम पीरों के मकबरे बनाकर उनकी पूजा करना भारतीय संस्कृति की ही देन है। संगीत विरोधी इस्लाम में भजन, नृत्य और संगीत द्वारा अपने पीर-पैगम्बरों की भक्ति भारतीय कीर्तन के रूपान्तर ही तो हैं। राम और रहीम, कृष्ण और करीम की एकता के प्रतिपादन द्वारा इस देश के अनेक सन्तों ने इस्लाम और हिन्दू धर्म में समन्वय का प्रयत्न किया। यही समन्वय की प्रवृत्ति थी, जिसने भारत की प्राचीन संस्कृति की परम्परा को अब तक अक्षुण्ण रखा है।

भारतीय समाज के आधार

भारतीय संस्कृति में कुछ परम्परागत आदर्श हैं। इन आदर्शों के अनुसार व्यक्ति तथा समाज का पारस्परिक सम्बन्ध एक दूसरे पर निर्भरशील व लेन-देन का सम्बन्ध है। एक के बिना दूसरा अर्थहीन है। समाज कुछ आदर्शों को व्यक्ति के सम्मुख प्रस्तुत करता है और व्यक्ति उन आदर्शों को अपनाकर अपने जीवन को सफल बनाने के साथ-साथ समाज की सार्थकता

को बढ़ाता है। वास्तव में इस अन्तःसम्बन्ध और अन्तःनिर्भरता के बिना कोई भी समाज व्यवस्था बनी नहीं रह सकती। परम्परागत भारतीय समाज में परिवर्तन की गति आज की तुलना में धीमी थी, जिसके कारण सामाजिक जीवन में उनके प्रभाव अधिक स्थायी व स्पष्ट थे। यहाँ भारतीय समाज के उन्हीं परम्परागत आधारों की संक्षेप में विवरण जो इस प्रकार है—

वर्ण व्यवस्था

भारतीय संस्कृति में वर्ण व्यवस्था का विधान समाज की विभिन्न श्रेणियों के लोगों में कार्यों का उचित बंटवारा करके सामाजिक संगठन बनाये रखने के लिए किया गया है, जिससे प्रत्येक मनुष्य अपने-अपने निर्दिष्ट कर्तव्यों का पालन करते हुए आपसी मतभेदों एवं वैमनस्य से मुक्त होकर अपना तथा समाज का पूर्ण विकास कर सके।

प्राचीन भारतीय साहित्य में वर्ण व्यवस्था की उत्पत्ति सम्बन्धी उल्लेख प्राप्त होते हैं। इनमें सर्वप्रथम इसे दैवीय व्यवस्था मान सिद्धांत है जिसका प्रतिपादन ऋग्वेद, महाभारत, गीता आदि में मिलता है। ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में चारों वर्णों को विराट् पुरुष के चारों अंगों से उत्पन्न कहा गया है। तदनुसार उनके मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, जंघे से वैश्य तथा पैरों से शूद्र की उत्पत्ति हुई।⁵

पुरुषार्थ

भारतीय संस्कृति में मनुष्य तथा समाज की उन्नति के निमित्त जिन आदर्शों का विधान किया गया उन्हें पुरुषार्थ की संज्ञा दी जाती है। पुरुषार्थों का सम्बन्ध मनुष्य तथा समाज दोनों से है। पुरुषार्थों का उद्देश्य मनुष्य के भौतिक तथा आध्यात्मिक सुखों के बीच सामंजस्य स्थापित करना है। भारतीय परम्परा भौतिक सुखों को क्षणिक मानते हुए भी उन्हें पूर्णतया त्याज्य नहीं समझती बल्कि उनके प्रति अतिशय आसक्ति का ही विरोध करती है। मनुष्य भौतिक सुखों के संयमित उपभोग द्वारा ही आध्यात्मिक सुख प्राप्त करता है। भौतिक सुखों को आध्यात्मिक सुखों की प्राप्ति में साधक माना गया है, बाधक नहीं। दोनों घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। दोनों का समन्वित स्वरूप पुरुषार्थों के माध्यम से प्रतिपादित किया गया है। पुरुषार्थ चार हैं— धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष⁶ इनमें अर्थ तथा काम भौतिक सुखों के प्रतिनिधि हैं, जबकि धर्म और मोक्ष आध्यात्मिक सुखों के प्रतिनिधि हैं। मोक्ष मानव जीवन का चरम लक्ष्य है जिसकी प्राप्ति में शेष पुरुषार्थ सहायक हैं।

संस्कार

संस्कार जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त सम्पन्न किये जाते थे। अधिकांश गृह्यसूत्रों में अन्त्येष्टि का उल्लेख नहीं मिलता है। स्मृति ग्रन्थों में संस्कारों का विवरण प्राप्त होता है। इनकी संख्या चालीस तथा गौतम धर्मसूत्र में अड़तालीस मिलती है। मनुस्मृति में मनु ने गर्भाधान से मृत्यु पर्यन्त तेरह संस्कारों का उल्लेख किया है। बाद की स्मृतियों में इनकी संख्या सोलह स्वीकार की गयी है, आज यही सर्वप्रचलित है। ये संस्कारों की षोडश संख्या ही कालान्तर में लोकप्रिय हुई, जो इस प्रकार है— 1. गर्भाधान, 2. पुंसवन, 3. सीमन्तोन्नयन, 4. जात कर्म, 5. नामकरण, 6. निष्क्रमण, 7. अन्नप्राशन, 8. चूड़ाकरण या चूड़ाकर्म, 9. कर्णवेध या कर्णछेदन, 10. विद्यारम्भ, 11. उपनयन, 12. वेदारम्भ, 13. केशान्त, 14. समावर्तन, 15. विवाह तथा 16. अन्त्येष्टि।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में वैश्वीकरण

वैश्वीकरण एक मिश्रित प्रक्रिया है। इसकी असाधारण उपस्थिति और प्रयास प्रत्येक समाज की ऐतिहासिकता द्वारा संचालित होते हैं। भारतीय समाज के प्राचीन आदर्शों में एक 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा रही है। जिसमें सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार (कुटुम्ब) के रूप में परिभाषित किया गया है, एक ऐसा परिवार जिसके सदस्यों के सुख-दुःख एक हों। लेकिन वहीं आज वैश्वीकरण एक ऐसे प्लेटफार्म की रचना कर रहा है, जहाँ पर सभी लोग सुख के भागीदारी तो बन रहे हैं लेकिन दुःख के नहीं। अथर्ववेद में 'श्यत्र विश्वं भवत्येक नीडं' की भावना में सम्पूर्ण विश्व को एक घोंसले के रूप में प्रस्तुत किया था, जिसमें सभी राष्ट्र प्रेम एवं सहयोग के साथ रहें। परन्तु वैश्वीकरण अपने बहुआयामी प्रभाव के कारण विश्व की राष्ट्रीय एवं आंचलिक विविधताओं को प्रभावित किया है। भारत में जननीति के रूप में उदारीकरण की नीति को 1991 में लागू किया गया। इसके माध्यम से आर्थिक वैश्वीकरण का औपचारिक स्तर पर श्रीगणेश हुआ। यह एक राजनीतिक निर्णय था, जो जननीति के रूप में लागू किया गया था। आर्थिक वैश्वीकरण को कुछ इस तरह से परिभाषित किया जा सकता है, अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक बाजारों में चलने वाले आन्दोलनों द्वारा किसी देश की राष्ट्रीय सरकार की आर्थिक नीतियों का निर्धारण होता है। सम्पूर्ण विश्व को एक समग्र इकाई के रूप में तथा बाजार को इसके एक उपकरण के रूप में स्वीकार किया जाता है।

विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष, विश्व व्यापार संगठन⁷ जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा भारत को उसी साँचे में उनके स्वार्थों की पूर्ति के लिए ढाला जा रहा है। इस प्रकार से भारत में वैश्वीकरण गरीबी घटाने के बजाए बढ़ा रहा है और सामाजिक संरचनात्मक विभेद उत्पन्न कर रहा है। कुछ खास क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था में गिने-चुने लोगों के लिए यह समृद्धि के अन्तःक्षेत्र उत्पन्न कर रहा है, किन्तु कृषकों, कामगारों तथा हाशिये पर जीने वाले लोगों की गरीबी दूर करने में यह कोई योगदान नहीं दे रहा है। मार्क्सवादी अभिगम के अनुसार वैश्वीकरण, गरीबी दूर करने के लिए सामाजिक कल्याण की स्वायत्तशासी नीतियों से राज्य की क्षमता को नष्ट कर रहा है। कृषकों, श्रमजीवी वर्गों तथा नगरों व गावों में हाशिए पर जी रहे समुदायों के सशक्तीकरण के मार्ग में स्वतंत्र प्रयास के माध्यम से वैश्वीकरण राज्य का मददगार होने के बजाए बाधक है। गरीबों के कल्याण के नाम पर विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा राज्य के कार्यक्षेत्र को वैश्विक रूप प्रदान करते हुए इसके स्वैच्छिक स्वरूप को नष्ट किया जा रहा है। आलोचक यह भी कहते हैं कि भारत में वैश्वीकरण सामाजिक भेद एवं फूट को बढ़ा रहा है तथा वैश्विक पूँजीवाद पर राष्ट्रीय निर्भरता की प्रकृति और सम्भावनाओं का विस्तार कर रहा है तथा भारत में वैश्वीकरण की प्राथमिकता गरीबी घटाने के बजाए मुनाफे को अधिकाधिक बढ़ाना है, डॉ. रविप्रकाश पाण्डेय (2005) ने अपनी पुस्तक श्वैश्वीकरण एवं समाज में लिखा है कि आज भारत में किसी भी स्थापित और मान्य राजनीतिक दलों में कोई मतभेद नहीं है। सभी राजनीतिक दल वैश्वीकरण को एक जननीति के रूप में भारत में लागू करने के पक्षधर हैं।

भारत में वैश्वीकरण का प्रभाव

वैश्वीकरण प्रत्येक समाज की ऐतिहासिकता द्वारा संचालित होता है, यह समाज और उसकी अर्थव्यवस्था तथा संस्कृति को समान तरीके से प्रभावित नहीं करता है। वैश्वीकरण एक मिश्रित प्रक्रिया है, मार्टिन एलब्रो के अनुसार आधुनिक काल का पैर उखड़ गया है और नए वैश्विक युग ने अपने अक्षीय सिद्धान्तों एवं विशिष्ट सांस्कृतिक⁸ कल्पनाओं के साथ उसका स्थान ले लिया है। अतः वैश्वीकरण के प्रभाव सम्बन्धी आंकलन के विविध परिप्रेक्ष्य हैं। इन सबका सामान्यीकरण करके

कुछ प्रमुख सूचकों को आधार मानकर भारत में वैश्वीकरण के प्रभाव की विवेचना की जा सकती है। इस क्रम में इसे निम्नलिखित बिन्दुओं पर स्पष्ट किया जा सकता है—

1. आज वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप समय और दूरी में संकुचन हो रहा है। दुनिया के अधिकांश देशों के साथ भारत की अन्तःक्रिया में अब समय और दूरी की बाधा समाप्त हो रही है। विशेष रूप से संचार क्रांति, विश्व बाजार तथा विश्व अर्थव्यवस्था के साथ भारतीय बाजार तथा अर्थव्यवस्था के एकीकरण के कारण समय और दूरी का संकुचन एक ऐतिहासिक घटना है जिसे भारत में वैश्वीकरण के परिणाम के रूप में देखा जा सकता है।
2. स्वतंत्र भारत ने अपनी नीति के रूप में मिश्रित अर्थव्यवस्था को स्वीकार किया था। इसके अन्तर्गत सरकारी क्षेत्र, सहकारी क्षेत्र, सार्वजनिक क्षेत्र तथा निजी क्षेत्र, सभी को स्थान दिया था। इसी नीति के आधार पर भारत विकास के पथ पर अग्रसर था, किन्तु सन 1991 में भारत ने उदारीकरण की नीति लागू की, इसके परिणामस्वरूप देशी तथा विदेशी पूँजीनिवेश को प्रोत्साहित करना राष्ट्रीय प्राथमिकता बन गयी।
3. वैश्वीकरण का एक महत्वपूर्ण प्रभाव यह पड़ा है कि भारतीय अर्थव्यवस्था तथा भारतीय बाजार का वैश्विक अर्थव्यवस्था तथा बाजार के साथ तेजी से एकीकरण हो रहा है। भारत अपना औद्योगिक क्षेत्र तथा सेवा क्षेत्र विदेश हेतु खोल दिया है। विदेशी निवेश हेतु राष्ट्रीय प्रयास जारी है। विश्व व्यापार संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा विश्व बैंक जैसी अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय एवं वाणिज्यिक संस्थाओं का भारत स्थाई सदस्य है, अतः इस प्रकार से भारतीय अर्थव्यवस्था और बाजार का वैश्विक अर्थव्यवस्था एवं बाजार के साथ परस्पर निर्भरता का सम्बन्ध मजबूत हो रहा है।
4. भारत में वैश्वीकरण का वाहक मध्यम वर्ग है, बाजारवाद में यही मुख्य उपभोक्ता है, बहुराष्ट्रीय निगमों तथा ट्रांसनेशनल निगमों के उत्पाद का यही सर्वाधिक उपयोग, उपभोग करता है, मध्यम वर्ग ही सर्वाधिक उत्पन्न कर रहा है, आई.टी. तथा साफ्टवेयर क्षेत्रों में उत्पन्न होने वाले रोजगार तथा सेवाओं में इसी की सर्वाधिक खपत हो रही है, इस प्रकार से भारत में वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप एक नये मध्यमवर्ग का उदय तथा विस्तार हो रहा है।
5. भारत की उदारीकरण, निजीकरण, मुक्त अर्थव्यवस्था प्रणाली की नीतियों ने बहुराष्ट्रीय कम्पनियों तथा ट्रांसनेशनल कम्पनियों को भारत में विस्तार करने के लिए सुअवसर प्रदान किये हैं। इसके सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों

परिणाम सामने आये हैं। पूँजी का प्रवाह, नए रोजगार के अवसर, आधारभूत सुविधाओं का विकास, योग्यता और दक्षता को प्रोत्साहन आदि सकारात्मक परिणामों के साथ-साथ सामाजिक असुरक्षा, कमजोर तथा गैरदक्ष लोगों को हाशिए पर करने वाली परिस्थितियाँ, श्रम संघों का ह्रास, अधिक मुनाफे की नीति जैसे नकारात्मक परिणाम भी सामने आ रहे हैं।

निष्कर्ष

भारतीय संस्कृति ने प्राचीन काल से ही विश्व की विभिन्न सभ्यताओं और समाजों को प्रभावित किया है। भारत की सांस्कृतिक परंपरा केवल धार्मिक विचारों तक सीमित नहीं रही, बल्कि दर्शन, साहित्य, कला, संगीत, नृत्य, योग, आयुर्वेद, गणित, खगोल विज्ञान तथा जीवन-मूल्यों के माध्यम से भी विश्व तक पहुँची। वसुधैव कुटुम्बकम्⁸ अहिंसा, सहिष्णुता, समन्वय और मानव-कल्याण जैसे विचारों ने भारतीय संस्कृति को व्यापक मानवीय दृष्टिकोण प्रदान किया। बौद्ध धर्म के प्रसार ने भारत के सांस्कृतिक संबंधों को एशिया के अनेक क्षेत्रों से जोड़ा। दक्षिण-पूर्व एशिया में भारतीय भाषा, कला, स्थापत्य, धार्मिक परंपराओं और राजकीय अवधारणाओं के प्रभाव के प्रमाण मिलते हैं। आधुनिक युग में योग, ध्यान और आयुर्वेद की वैश्विक

लोकप्रियता ने भारतीय सांस्कृतिक विरासत को नई पहचान प्रदान की है। इसी प्रकार भारतीय साहित्य, सिनेमा, भोजन, संगीत और कला भी अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक संवाद का हिस्सा बने हैं।

अतः कहा जा सकता है कि भारतीय संस्कृति का वैश्विक प्रभाव आदान-प्रदान, समन्वय और सह-अस्तित्व की प्रक्रिया पर आधारित रहा है। इसकी विशेषता यह है कि इसने विभिन्न संस्कृतियों के साथ संपर्क स्थापित करते हुए अपने मूल तत्वों को बनाए रखा और वैश्विक सांस्कृतिक विविधता को समृद्ध किया।

संदर्भ सूची

1. पांडेय, गोविंद चंद्र. (2011). भारतीय संस्कृति और सभ्यता. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. शर्मा, रामशरण. (2003). भारत का प्राचीन अतीत. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. डेविड्स, टी0डब्ल्यू0 राईज (1903). बुद्धिस्ट इण्डिया, प्रकाशक टी0 फिशर अनविन, लन्दन।
4. श्रीवास्तव, आशीर्वादी लाल (1964). मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा।
5. शर्मा, रामशरण. (2005). प्राचीन भारत का इतिहास, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली।
6. त्रिपाठी, आचार्य प्रेमवल्लभ. (1970) पुरुषार्थ-चतुष्टय, चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस, वाराणसी।
7. चन्द्र, प्रकाश. वैश्वीकरण के दौर में भारत, कॉस्मोस बुकहाइव प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. उपाध्याय, बलदेव. (1955). भारतीय संस्कृति. शारदा संस्थान, वाराणसी।
9. विद्यालंकार, सत्यकेतु. (1960). भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास, प्रकाशन सरस्वती सदन मसूरी, उत्तराखण्ड।
10. चतुर्वेदी, सीताराम. (2012). भारतीय संस्कृति और उसका विकास. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।